

हिन्दी साहित्य में नारी चेतना और चिन्तन

डॉ. सुरेन्द्र कुमार
सहायक प्रोफ़ेसर (हिन्दी), राजकीय महाविद्यालय, भिवानी (हरियाणा)

ABSTRACT

भारत की सभी पौराणिक कथाओं में नारी की महिमा का गान किया गया है। वह कहीं आराध्या है और कहीं वेदज्ञ विदुषी के रूप में चित्रित हुई है किन्तु प्रारम्भ से ही यथार्थ के धरातल पर उसकी स्थिति विपरीत रही है। हिन्दी साहित्य के मध्यकाल में पहली बार मीराबाई ने पुरुषों के मिथ्याभिमान को ललकारा था और उसे चुनौती दी थी। उसके कई सौ वर्ष बाद आधुनिक काल में पुरुष लेखकों और कवियों के साथ–साथ स्वयं महिला लेखिकाओं ने अपनी आवाज़ को बुलन्द किया है और वे अपने अधिकारों के प्रति सजग हुई हैं। उन्होंने आदर्श की पुतली या पुरुष की कठपुतली बने रहने की अपेक्षा संघर्ष के मार्ग को अपनाया है। आधुनिक युग में जबसे नारी विमर्श की अवधारणा ने जोर पकड़ा है तब से उसने परम्पराओं को तोड़ने का साहस दिखाया है। उसने स्वयं लेखनी उठाई है और अपने भोगे हुए यथार्थ को मार्मिक अभिव्यक्ति दी है। उसने हर प्रकार की 'श्रृंखला की कड़ियों' को तोड़ दिया है और 'खूब लड़ने वाली मर्दानी' बनकर उभरी है। उसकी 'नीर भरी दुःख की बदली' अब बरस चुकी है। साहित्यिक क्षितिज पर जबसे नारी का अधिकार त्याग बनकर उभरने लगा है तब से पुरुषों की दया की पात्र बने रहने वाली उसकी छवियाँ 'अतीत का चलचित्र' और 'स्मृति की रेखाएँ' बनकर रह गई हैं।

KEYWORDS: आदिकाल में नारी, भक्तिकाल में नारी, रीतिकाल में नारी, आधुनिक काल में नारी

प्रस्तावना

यत्र नार्यस्तु पूज्यंते रमंते तत्र देवताः ।
यत्रैतास्तु न पूज्यंते सर्वास्तत्राफलाः क्रियाः ।।

अर्थात् मनुस्मृति में नारी की महत्ता प्रतिपादित करते हुए कहा गया है कि – जहाँ नारियों की पूजा होती है वहाँ देवताओं का निवास होता है, जहाँ इनका आदर नहीं होता है, वहाँ सारे धर्म और कर्म निष्फल हो जाते हैं। नारी पुरुष की पूरक सत्ता है। वह मनुष्य की सबसे बड़ी शक्ति है उसके बिना पुरुष अपूर्ण है। नारी ही उसे पूर्णता देती है। पुरुष के उजड़े हुए उपवन को नारी ही पल्लवित करती है। संसार का प्रथम मानव भी जोड़े के रूप में धरती पर अवतरित हुआ था। संसार की सभी पौराणिक कथाओं में इसका उल्लेख है। ऋषि गार्गी, मैत्रेयी, विश्ववारा, अरुंधति, लोपामुद्रा, शचि, घोषा, इन्द्राणी, देवयानी आदि सभी महिलाएँ विदुषियाँ, परम् ब्रह्मवादिनी और वेदज्ञ थीं। ये उस युग की ऐसी नारियाँ हैं, जिन्होंने अपनी प्रतिभा के बल पर ऋषियों का पद प्राप्त किया था। वैसे तो स्त्री और पुरुष एक दूसरे के पूरक हैं फिर भी कर्त्तव्य, उत्तरदायित्व तथा त्याग के कारण पुरुष से नारी कहीं अधिक महान है। नारी जीवन–यात्रा में पुरुष के साथ ही नहीं चलती वरन् समय आने पर उसे शक्ति और प्रेरणा भी देती है। नारी की वाणी जीवन के लिए अमृत–स्रोत है। उसके नेत्रों में करुणा, ममता और सरलता के दर्शन होते हैं। नारी की हँसी में संसार की निराशा और कड़वाहट मिटाने की अपूर्व क्षमता है। संसार के सभी महापुरुषों ने नारी में उसके दिव्य स्वरूप के दर्शन किए हैं, जिससे वह पुरुष के लिए पूरक सत्ता के ही नहीं बल्कि उर्वर भूमि के रूप में उसकी उन्नति, प्रगति एवं कल्याण का मार्ग प्रशस्त करती है। जन्मदात्री होने के बावजूद वह युग–युग से समानता और शिक्षा के अधिकार से वंचित रही है। उसकी कारयित्री और भावयित्री प्रतिभाओं का दमन किया गया है। मर्यादाओं के नाम पर नारी के हिस्से में केवल बेड़ियाँ आई हैं।

जहाँ तक हिन्दी साहित्य की बात है, उसमें नारी के दो आयाम स्थापित किए गए हैं– एक लेखिका या कवयित्री के रूप में तथा दूसरा साहित्यिक रचनाओं में नारी पात्रों का अवतरण। हिन्दी साहित्य के आदिकाल और रीतिकाल में महिला लेखिकाएँ नगण्य हैं। इन कालों में वह या तो त्याग की प्रतिमूर्ति है या काम–वासना की पुतली किन्तु भक्तिकाल में मीराबाई, सहजोबाई, दयाबाई जैसी कुछ महिला कवयित्रियों का नाम बड़ी श्रद्धा के साथ लिया जा सकता है किन्तु आधुनिक काल नारी पात्रों और साहित्यकारों की दृष्टि से कुशलक्षेम की आशा बंधाता है। हिन्दी साहित्य में प्रारम्भ से ही न्यूनाधिक मात्रा में पुरुष लेखकों ने नारी विमर्श को दिशा देने और दिशा बदलने में महत्वपूर्ण भूमिका निभाई है। अतः उनकी लेखनी स्त्री साहित्यकारों के लिए प्रेरणा बनी है, इससें इनकार नहीं किया जा सकता।

आदिकाल में नारी – हिन्दी साहित्य का आदिकाल संक्रमण का काल था। यह राजनीतिक उठापटक, विद्रोह, विद्वेष, दल–छद्म, षड्यंत्रों और घात–प्रतिघात का युग था। रजवाड़े अपने अस्तित्व की लड़ाई लड़ रहे थे। विदेशी आक्रांता उनकी आपसी फूट का लाभ उठाकर भारत–भूमि पर अपने पैर पसार रहे थे। नारी का श्रृंगार और सौन्दर्य संकट का संधान था। अतः महिलाएँ अपने सतीत्व की रक्षा के लिए परदे और चारदिवारी में कैद थीं। केवल अभिजातीय गौरव की रक्षा के लिए पति और पुत्र के बलिदान की अभिलाषा और पत्नी के द्वारा जौहर के लिए तत्परता नारी के आम्माभिमान का पर्याय बन गया था –

"भल्ला हुआ जु मारिया बहिणि महारा कंतु।
लज्जेजं तु वयसिअहु जइ भग्गा घरु एंतु।।"1

अर्थात् हे बहन! भला हुआ जो हमारा पति युद्ध में मारा गया यदि वह भागा हुआ घर आता तो मैं अपनी समवयस्काओं से लज्जित होती और उनको क्या मुँह दिखाती। इस युग में नारी के लिए अतुलनीय त्याग, सेवा और समर्पण के आदर्श मानक निर्धारित कर दिए गए थे। उससे आगे उसकी भूमिका की कल्पना नहीं की जा सकती थी इसलिए कवियों की कलम का कौशल अपनी सिद्धि और प्रसिद्धि को प्राप्त न कर सका। इस विषय में इतना ही कहा जा सकता है कि "वीर काव्य में भी नारी का शृंगार सौरभ की मादकता से बोझिल स्वरुप ही दृष्टिगत होता है। उसके वीरांगना, वीरमाता और क्षत्राणी के प्रांजल रूप को शृंगार की धूप ने प्रच्छन्न–सा कर दिया हैं।"2

भक्तिकाल में नारी – इस काल में भी नारी भक्तिकाव्य के केन्द्र में नहीं रही अपितु भक्ति के केन्द्र में तो राम और कृष्ण ही थे। सूफी कवियों ने एक ओर नारी को परमात्मा की प्रतीक मानकर उसको महिमा और गरिमा प्रदान की तथा अपनी काव्य–कृतियों के नामकरण में भी उसको गौरव प्रदान किया किन्तु दूसरी ओर 'गोरखधंधा' भी कह दिया। कबीर के काव्य में कनक और कामिनी नारी की माया को 'महाठगिनी' जानकर उसे अछूत घोषित कर दिया। वह भक्ति, मुक्ति और ज्ञान के मार्ग की अवरोधक बनकर रह गई –

"नारि नसावै तीनि सुख, जा नर पासैं होइ।
भगति मुकति निज ग्यान मैं, पैठि न सकई कोइ।।"3

कबीर की नारी की छाया साँप को भी अंधा बना देने की सामर्थ्य रखती है। उसकी प्रीति नरक के द्वार खेल देती है। वह बीसियों फनों जितना विष धारण करके रखती है –

"नागिन के तो दोये फन, नारी के फन बीस।
जाका डसा ना फिर जीये, मरि है बिसबा बीस।।"4

लेकिन ऐसे दोहों को देखकर यह कह देना कि कबीर नारी–निन्दक थे, उनके प्रति दुराग्रह की भावना को इंगित करता है किन्तु वे नारी के सतीत्व और पातिव्रत्य धर्म के प्रशंसक भी थे। कंचन और कामिनी जीवन की प्रगति और गति में बाधक तो थी तभी तो रत्नावली की केवल एक फटकार तुलसीदास का अस्थि–चर्ममय देह से मोह भंग कर देती है और उनके रामकाव्य में सीता का सतीत्व तथा नारी की गरिमा अमरत्व को प्राप्त करती है और इस प्रकार वे नारी को "ताड़ना की अधिकारी" बताने के अपयश को धो डालते हैं और वह संकट–काल की सच्ची सखी बन जाती है –

"धीरज, धर्म, मित्र अरु नारी। आपद काल परिखिअहिं चारी।।"5

यद्यपि "तुलसीदास के रामचरितमानस तथा अन्य ग्रंथों के विभिन्न प्रसंगों में ऐसी उक्तियाँ हैं जो किसी भी देशकाल की नारी के प्रति न्याय नहीं करती। उन्होंने नारी की प्रकृति, उसके चारित्र्य, बुद्धि–विवेक, आचार–व्यवहार सभी की निन्दा की है।"6 इस काल में कई उच्चकोटि की महिला कवयित्रियाँ भी हुई हैं। उनमें सहजोबाई, दयाबाई और मीराबाई का नाम विशेष रूप से उल्लेखनीय है। सहजोबाई और दयाबाई चरणदास की शिष्याएँ थीं। दयाबाई का विषय वर्णन निराकार प्रियतम का आह्वान और विरह निवेदन ही है। प्रियतम की भक्ति–माधुरी में प्रेमोन्मत्त होकर सहजोबाई सहज भाव से गाती हैं –

"बाबा नगरु बसाओ।
ज्ञान दृष्टि सूं घट में देखौ, सुरति निरति लौ लावो।।
पाँच मारि मन बसकर अपने, तीनों ताप नसावौ।।"

मीरा भक्तिकाल की सर्वश्रेष्ठ कवयित्री थीं। मीरा की कोमल वाणी उनके पदों के लालित्य को उत्कर्ष प्रदान करती है। मीरा ने अपने अनुभूत प्रेम और विरह वेदना को अपने भजनों और पदों में स्थान दिया। उनका माधुर्य भारतीय जनमानस को आज भी आनन्द–विभोर करने की क्षमता रखता है। श्रीकृष्ण के प्रति मीरा का प्रेम दाम्पत्य और माधुर्य–भाव का चरमोत्कर्ष था। उसमें निस्स्वार्थ सेवा की साधना और समर्पण की उत्कट लालसा विद्यमान थी जिसके लिए वह समाज की सामन्ती सोच से लोहा लेने का साहस रखती हैं और लोकलाज की बेड़ियाँ तोड़कर डंके की चोट पर कहती हैं –

"मेरे तो गिरधर गोपाल, दूसरो न कोई,
जाके सिर मोर मुकुट, मेरो पति सोई।
सन्तन ढिंग बैठि–बैठि, लोक लाज खोई,
अंसुवन जल सींचि–सींचि, प्रेम–बेलि बोई।।"

मीरा की यह वेदना, टीस और कसक सम्भवतः हिन्दी की किसी अन्य कवयित्री में नहीं मिलती। मीरा का यह प्रेम हिन्दी साहित्य की अमूल्य निधि है।

रीतिकाल में नारी – रीतिकालीन युग मुगलिया सल्तनत का दौर था। जहाँ राजा और सामन्त विलासिता के पंक में धंसे थे वहीं दूसरी ओर इस दौर के कवियों की कविता–कामिनी कामुकता के दलदल में अपनी अस्मिता से समझौता करती दिखाई देती है। इस काल का प्रेम–व्यवहार वासना का व्यापार था। नारी का नखशिख चित्रण उसके रूप–सौन्दर्य को और अधिक मादक बनाने का साधन मात्र था। इसलिए रीतिकालीन कवियों की मनोवृत्ति नारी–सौन्दर्य में अधिक रमी रही। उसके अंग–प्रत्यंग और मांसलता का सौन्दर्य–संधान करना उसका लक्ष्य बन गया। राधा और कृष्ण की आड़ लेकर भी इस युग के कवि लौकिक नायक–नायिका के केलि–विलास में रमे रहे और उनका दिव्य–प्रेम अपनी गरिमा, सात्विकता, सरलता और श्रद्धा–भाव को विस्मृत कर बैठा। इसी और संकेत करते हुए रीतिकाल के प्रसिद्ध कवि और आचार्य भिखारीदास ने लिखा था–

"आगे के सुकवि रीझि हैं तौ कविताई, न तो राधिका कान्हा के सुमिरन को बहानौ है।"

अधिकांशतः "विलासिता की प्रधानता व सामन्तीय प्रभाव के कारण ही

इन लोगों की सौन्दर्य भावना भी विषयीगत न होकर विषयगत रही है। नारी के बाह्य रूप की परिचायक अंगों की बनावट में ही इनकी दृष्टि उलझी रही है, वह उसके आन्तरिक गुणों तक नहीं पहुँच पाई है।"7

इस दरबारी युग में भी रीतिमुक्त कवियों का प्रेम किसी हद तक अलौकिकता की ओर उन्मुख रहा है। इस युग में रीतिमुक्त कवि आलम की पत्नी शेख रंगरेजिन नाम की एकमात्र कवयित्री का अवश्य उल्लेख मिलता है कि आलम ने एक बार अपनी पगड़ी रंगने को दी जिसमें एक कागज बंधा चला गया उसमें दोहे की पहली पंक्ति लिखी हुई थी तथा दूसरी पंक्ति को शेख ने पूरा किया था–

"कनक छरी सी कामिनी काहे को कटि छीन।
कटी को कंचन काटि बिधि कुचन मध्य धरि दीन।।"

इस प्रकार रीतिकाल की यह विडम्बना ही कही जाएगी कि इस युग में समस्त पुरूष कवियों का रचना संसार केवल नारी केन्द्रित है किन्तु यह काल कवयित्री विहीन है।

आधुनिक काल में नारी – आधुनिक काल में प्रारम्भ से नारी के प्रति दृष्टिकोण बदलता दिखाई दिया है। भारतेन्दु मंडल के कवियों ने नारी सम्बन्धी कुप्रथाओं का विरोध किया तथा नारी को अधिकार दिलाने को आह्वान किया। द्विवेदी युग में अयोध्या सिंह उपाध्याय 'हरिऔध' ने 'प्रियप्रवास' में उसी राधा को समाज सेविका, पर्यावरण की सजग प्रहरी और प्राणी–मात्र की संरक्षिका घोषित किया जिसको रीतिकाल में 'स्मरण का बहाना' समझ लिया था। राष्ट्रकवि मैथिलीशरण गुप्त ने 'साकेत' ओर 'यशोधरा' में इतिहाससम्मत किन्तु उपेक्षित नारी पात्रों को गरिमा और महिमा प्रदान की। जिस अबला जीवन की मार्मिक कहानी 'आँचल में दूध' और 'आँखों में पानी' तक सीमित थी वही नारी सुभद्राकुमारी चौहान की कविता में 'खूब लड़ने वाली मर्दानी' और 'झांसी की रानी' बन जाती है और वह पुरुषों की कायरता को धिक्कारने का अदम्य साहस रखती है

"सबल पुरुष यदि भीरु बनें, तो हमको दे वरदान सखी,
अबलाएं उठ पड़े देश में, करें युद्ध घमासान सखी।
पन्द्रह कोटी असहयोगिनियाँ दहला दें ब्रह्मांड सखी,
भारत लक्ष्मी लौटने को रच दे लंका कांड सखी।
रामचन्द्र की विजय–कथा का भेद बता आदर्श सखी,
पराधीनता से कैसे छूटे यह प्यारा भारतवर्ष सखी!"8

छायावादी कवियों ने नारी को सहचरी, सखी, प्रेयसी, जननी, देवी आदि अनेक सात्विक रूपों में चित्रित किया है। कवि जयशंकर प्रसाद नारी को श्रद्धा, समरसता और विश्वास की त्रिवेणी चित्रित करते हुए कामायनी में लिखते हैं –

''नारी तुम केवल श्रद्धा हो, विश्वास रजत नग–पगतल में
पीयूष स्रोत–सी बहा करो, जीवन के सुन्दर समतल में'' 9

महादेवी वर्मा का काव्य दुःख और पीड़ा का सागर है इसलिए उनकी विरह–वेदना उन्हें 'आधुनिक युग की मीरा' घोषित करती है। उनकी 'श्रृंखला की कड़ियां' नारी सशक्तीकरण का सुन्दर उदाहरण हैं, जिसमें नारी–जागरण एवं मुक्ति के सवाल को उठाया गया है। निराला 'दलित भारत की विधवा' को 'इष्टदेव के मन्दिर की पूजा' कहते हैं तो पंत भी 'मानवी प्रतिष्ठित नारी' के लिए उसकी मुक्ति के स्वर को और अधिक मुखरित करते दिखाई देते हैं –

"योनि नहीं है रे नारी, वह भी मानवी प्रतिष्ठित,
उसे पूर्ण स्वाधीन करो, वह रहे न नर पर अवसित।
मानव मुक्त करो नारी को, चिर वन्दिनी नारी को,
युग–युग की बर्बर कारा से जननि, सखी, प्यारी को।"10

भगवतीचरण वर्मा नारी को 'जीवन की रानी' और 'जीवन–निधि' कहते हैं जो नरेन्द्र शर्मा की 'द्रौपदी' दुःखों को सहकर भी 'नर की शक्ति' बनकर उभरती है। यही कारण है कि नई कविता का कवि नारी को कविता की 'आदि प्रेरणा' मानता है –

"तुम छन्दों की आदि प्रेरणा,
प्रथम श्लोक की प्रथम वेदना।"11

स्वातंत्र्योत्तर कवि रघुवीर सहाय ने नारी जीवन की त्रासदी का वास्तविक चित्र खींचा हैं, उन्होंने अपने काव्य में स्वतंत्रता के बाद की स्त्री के जीवन की अनेक समस्याओं को रेखांकित किया है। वे कहते हैं–

''नारी बेचारी है
पुरुष की मारी
तन से क्षुधित है
मन से मुदित है
लपक कर झपक कर
अंत में चित्त है।''12

आज का कवि नारी हितों का सजग प्रहरी और संरक्षक है कि वह राम को भी सीता जैसी पतिव्रता नारी को शक मात्र से त्यागना तो दूर शक करने की भी अनुमति नहीं देता है। वह विवाह के बन्धन के धागे को शिव के धनुष से भी अधिक मजबूत मानता है। इसलिए वह राम से भी सवाल करने का साहस रखता है –

"राम! बताओ जग के शक पर क्यों सीता को त्यागा,
टूटा करते हैं धनुष, टूटता नहीं ब्याह का धागा।।"13

इस प्रकार यदि हिन्दी साहित्य के समूचे नारी–विमर्श पर दृष्टिपात करें तो ऐसा प्रतीत होता है कि यदि श्रीराम के जीवन में सीता न हो तो रामायण में कुछ नहीं रह जाता, द्रौपदी, कुंती, गांधारी आदि का चरित्र निकाल देने पर महाभारत की गाथा कुछ नहीं रह जाती और पाण्डवों का जीवन संग्राम भी अधूरा रह जाता है। शिव के साथ पार्वती, कृष्ण के साथ राधा, राम के साथ सीता, विष्णु के साथ लक्ष्मी का नाम हटा दिया जाए तो इनकी लीला, गाथा और इनका चरित्र सब आधे–अधूरे रह जाते हैं। अतः हम स्त्री की महत्ता और महानता को समझ सकते हैं किन्तु नारी की इतनी अधिक महिमा के बावजूद

उसी अनुपात में उसे कभी समाज में गरिमा क्यों नहीं मिली, यह विचारणीय है। ''पुरुष की सत्ता स्त्री की चेतना और उसकी गति को बाधित करती रही है। दरअसल सारा विधान ही इसी के निमित्त बनाया गया है, इतिहास गवाह है कि सारे विश्व में पुरुष–तंत्र स्त्री अस्मिता और उसकी स्वायत्तता को नृशंसता पूर्वक कुचलता आया है। उसकी शारीरिक सबलता के साथ–साथ न्याय, धर्म, समाज जैसी संस्थाएं पुरुष के निजी हितों की रक्षा करती हैं और स्त्री को कमजोर और हीन साबित करती हैं।''14 इस प्रकार हिन्दी साहित्य में न्यूनाधिक मात्रा में स्त्री–उत्पीड़न और जीवन–संघर्ष को अवश्य स्थान मिला है।

निष्कर्ष

हिन्दी साहित्य आदिकालीन साहित्य से लेकर आधुनिक साहित्य तक निरंतर बहुमुखी रहा है। आधुनिक युग का साहित्य अपनी व्यापकता और विविधता की दृष्टि से अन्य कालों के साहित्य की तुलना में निस्संदेह हर दृष्टि से पृथक और सर्वश्रेष्ठ है। आज साहित्य में अनेक प्रकार के विमर्श जाग्रत हो रहे हैं। आधुनिक साहित्य में नारी विमर्श, किसान विमर्श, दलित विमर्श और आदिवासी विमर्श के साथ–साथ आधुनिक युग की तमाम विसंगतियां स्थान प्राप्त कर रही हैं। यह साहित्य की जीवंतता का प्रमाण है। हिन्दी साहित्य में स्त्रियों के विमर्श को स्त्रियों के लिए और स्त्रियों के द्वारा ही नहीं अपितु हिन्दी के गद्य और पद्य साहित्य में भारतेन्दु और महावीरप्रसाद द्विवेदी से लेकर प्रसाद, पंत और निराला तक तथा प्रेमचन्द से लेकर राजेन्द्र यादव तक सम्प्रति अनेकानेक पुरूष लेखकों ने भी नारी समस्या और उसके सरोकारों को व्यापक फलक पर उकेरा है तथा स्त्री जाति को उसके अधिकारों के प्रति सजग किया है। उषा प्रियम्वदा, कृष्णा सोबती, मन्नू भण्डारी, शिवानी आदि लेखिकाओं ने नारी मन में छिपी हुई शक्तियों को पहचाना है और नारी की दिशाहीनता, दुविधाग्रस्तता, कुण्ठा आदि का विश्लेषण किया है।

संदर्भ सूची

1. सिद्ध हेमचन्द्र के 'शब्दानुशासन' से उद्धृत
2. डॉ. उषा पाण्डेय, मध्ययुगीन हिंदी साहित्य में नारी भावना, पृष्ठ 68
3. (सं.) श्यामसुन्दर दास, कबीर ग्रंथावली, लोकभारती प्रकाशन, इलाहाबाद, पृष्ठ 79
4. कबीर रचित पद
5. तुलसीदास, श्रीरामचरितमानस, अरण्यकांड, चौपाई 5
6. डॉ. नगेन्द्र, आस्था के चरण, पृष्ठ 39
7. डॉ. नगेन्द्र (सं.), हिन्दी साहित्य का इतिहास, पृष्ठ 306
8. सुभद्राकुमारी चौहान, रचित 'विजयादशमी' कविता से उद्धृत
9. जयशंकर प्रसाद, कामायनी, लज्जा सर्ग से उद्धृत
10. सुमित्रानन्दन पन्त, ग्राम्या, पृष्ठ 85
11. प्रभाकर माचवे, तारसप्तक, पृष्ठ 53
12. रघुवीर सहाय, नारी (कविता) से उद्धृत
13. रघुवीरशरण मित्र, भूमिजा, अरण्य रोदन, भारतीय साहित्य प्रकाशन, मेरठ, पृष्ठ 22
14. चाणक्य विचार, मई, 2009, लखनऊ, पृष्ठ 43